P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* (Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

बालक का संवेगात्मक विकास

आलोक कटारा
सहायक प्राध्यापक,
शारीरिक शिक्षा विभाग,
शासकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
फतेहाबाद, आगरा,
उ.प्र., भारत

सारांश

व्यक्ति के जीवन में संवेगों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथा व्यक्ति के वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास में संवेगो का योगदान होता है। लगातार संवेगात्मक असन्तुलन अस्थिरता व्यक्ति के वृद्धि एवं विकास को प्राभावित करती है। ''संवेग से तात्पर्य एक ऐसी आत्मनिष्ठ भाव की अवस्था में होता है। जिसमें कुछ शारीरिक उत्तेजना पैदा होती है और फिर जिसमें कुछ खास–खास व्यवहार होते है।''

संवेग व्यक्ति के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करते है। विभिन्न अवस्थाओं में संवेगात्मक विकास भिन्न – भिन्न प्राकर में होता है। शैशवावस्था में शिशु का संवेगात्मक व्यवहार अस्थिर और अस्पष्ट होता है। बाल्याव्यवस्था में बालक के संवेग अधिक निश्चित तथा शिष्टता वालें हो जाते हैं। किशोरावस्था में बा लक के संवेग स्थायी रुप धारण कर लेते है। थकान, स्वास्थ्य, मानसिक योग्यता, अभिलाषा, परिवार, निर्धनता, सामाजिक स्थिति, सामाजिक स्वीकृति आदि ऐसे कारक हैं जो संवेगों पर अपना प्रभाव डालते हैं। शिक्षकों और अभिभावकों को बच्चे के संवेगात्मक व्यवहार को समझकर उनका उचित पथप्रदर्शन कर उनके जीवन को सुखी और सफल बनाना चाहिए।

मुख्य शब्द : संवेग, अवस्था, संवेगात्मक व्यवहार, अनुभूति, उद्दीपक।

प्रस्तावना

मानव जीवन में संवेगों का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। मानव को जन्म के बाद ही संवेगों की अनुभूति होने लगती है। संवेगों के माध्यम से ही व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता का पता चलता है, जैसे प्रसन्नता , हर्ष, आनन्द, दया, सहानुभूति तथा प्रेम आदि स्वस्थ शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ता देते है। जबकि क्रोध, घृणा, चिन्ता, ईष्या, द्वैष, अस्वस्थ संवेग कहे जाते है। संवेग बालक के स्वस्थ समायोजन में तभी सहायक हो सकते हैं जब उनकी अभिव्यक्ति के उचित रुपों को बालक अपने परिवारिक परिवेश से सीखता है। बालक के भीतर अनेक व्यवहारों को उत्पन्न करने में उसके संवेग प्रेरक प्रवृत्तियों का कार्य भी करते है।

प्रत्येक वस्तु व्यक्ति या स्थिति के प्रति हमारे मन में एक भाव होता है जो सुख–दुख, प्रसन्नता – विषाद, प्रेम, घृणा, क्रोध, अक्रोध प्रकार का हो सकता है। वास्तव में व्यक्ति में जो अनुभतियाँ होती है, वही संवेग है। अतः संवेगों के स्वरुप उनकी अभिव्यक्तियों एवं अनुभूतियों का बालक के शारीरिक एवं मानसिक व्यवहार एवंक्रिया पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है इसे संवेगात्मक विकास द्वारा समझा जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य

विभिन्न अवस्थाओं में व्यवहार अथवा संवेगात्मक विकास के विषय में ज्ञान प्रदान करना।

संवेगात्मक विकास का स्वरुप एवं परिभाषा

संवेगों के स्वरुप का समझने के लिए हम उन विशिष्ट वाह्य उददोपकों को दृष्टि में रख सकते हैं जो प्राणी के भीतर संवेगात्मक व्यवहार को उत्पन्न करते है। उदाहरणार्थ –भय अथवा आकर्षण, प्रेम अथवा घृणाकुण्ठाएँ अथवा सन्तुष्टि आदि संवेगात्मक क्रियाओं को जन्म देते हैं। ऐसे उद्दीपकों से प्रभावित होकर प्राणी जो व्यवहार प्रदर्शित करता है, वह संवेगात्मक व्यवहार अथवा विकास कहा जाता है। अपमान होने पर व्यक्ति के अन्दर क्रोध का संवेग उत्पन्न हो जाता ह। किसी परीक्षा अथवा कार्य में सफलता हासिल कर लेते पर उसमें हर्ष का संवेग उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार के संवेगों की अनुभूति से प्रभावित होकर प्राणी जो व्यवहार करता है, वही संवेगात्मक व्यवहार है। संवेगात्मक व्यवहारों की व्यवहारों की व्याख्या संवेग की दशा में होने वाले बाहय एवं आन्तरिक शारीरिक परिवर्तन के आधार पर की जाती है। जैसे हद्य का धड़कना, साँस की गति तेज होना पसीना आना, घबराना, गला सूख जाना,

अतिरिक्त रक्त संचार अदि इसी प्रकार के अन्य लक्षण संवेग की दशा में प्राणीके भीतर उत्पन्न हो जाते हैं। उपर्युक्त सभी लक्षण बाहर से देखे जा सकते है। लेकिन इनके अतिरिक्त भी कुछ आन्तरिक परिवर्तन घटित होते है। ये व्यक्ति क भीतर जिस प्रकार की चेतन मानसिक अनुभूति पायी जाती है, उसके आधार पर जाने जाते है। क्रोध, भय, प्रेम, घृणा की दशाओं में व्यक्ति जिस प्रकार की भावनाओं का अनुभव करता है। वे सामान्य दशाओं में अनुभव नही की जाती है। जैसे साँप को देखकर व्यक्ति का भयभीत हो जाना। यहाँ भय का संवेग उत्पन्न हुआ। यद्यपि इन मानसिक अनुभूतियों को देखा नहीं जा सकता, फिर भी इनके अस्तित्व को इनकार करना नामुमकिन है। वस्तुतः संवेग प्राणी का अत्यन्त जटिल व्यवहार है। जिसमें उसके समस्त मनोदैहिक पक्षों का समावेश होता है। सम्बन्धित उद्दीपकों का प्रत्यक्षीकरण किये बिना संवेग उत्पन्न नही होते।

अतः उद्दीपक का पत्यक्षीकरण करने पर संवेगों की अनुभूति होती है, तभी व्यक्ति संवेगात्मक व्यवहार करता है।

रॉस

''संवेग चेतना की वह अवस्था हैं जिसमें सगात्मक तत्व की प्रधानता रहती है।

बुडबर्थ

''संवेग, व्यक्ति की उत्तेजित दशा है।''

जरशील्ड

''किसी भी प्रकार के आवेश आने, भड़क उठने तथा उत्तेजित हो जाने की अवस्था को संवेग कहते है।''

यंग

संवेग सम्पूर्ण व्यक्ति का तीव्र उपद्रव है इसकी उत्पत्ति मनोवैज्ञानिक होती है। इसके अन्तर्गत व्यवहार, चेतना, अनुभव तथा अन्तरावयव क्रियाएँ सम्मिलित होती है।

अतः परिभाषाओं से स्पष्ट है कि संवेग का भावात्मक स्वरुप वाहय तथा आन्तरिक संवेदनाओं के कारण प्रभावित होता है। तथा जिसके परिणामस्वरुप प्राणी में ऐसे शारीरिक तथा अन्तरावयव परिवर्तन उत्पन्न होते है, जो प्राणी को क्रियाशील बनाते है।

संवेग की विशेषताएँ

संवेग की विशेषतायें निम्नलिखित है।

1. संवेगा के साथ शारीरिक परिवर्तन होते हैं जैसे – क्रोध का संवेग आने पर व्यक्ति का चेतना तमतमा उठना या आँखे लाल हो जाना।
2. संवेगों का मूल प्रवृत्तियों ले धना सम्बन्ध होता जैसे – साँप को देखकर भयभी होना तथा उसे देखकर भगाने की प्रवृत्ति जागृत होना।
3. संवेगों के सामने चिन्तन, विचार एवं ज्ञान तथा तके भी अपना खो देते हैं। जैसे क्रोध क आवेष में प्राणी की मानसिक, शारीरिक सोचने की शक्ति शिथिल पड़ जाती है।
4. ये सभी दशा एवं अवस्था में प्रकट होते ये जन्म से लेकर मृत्यपर्यन्त किसी न किसी रुप में पाये जाते है।
5. उद्धेलित तथा समाप्त होने पर भी वे व्यक्ति के मन में जोक की तरह चिपक जाते हैं। चाहे समय बाद वे भले ही पीछा छोड़ दें।

विभिन्न अवस्थाओं में संवेगात्मक विकास

व्यावहरिक उपयोगिता के दृष्टिकोण से संवेग सम्बन्धी अध्ययन के अन्तर्गत मानव में संवेग सम्बन्धो विकासो क्रम का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। यह अध्ययन मानव विकास के विभिन्न पहलुओं पर किया जा सकता है। ये अवस्थायें निम्नलिखित है–

शैशवास्था में संवेगात्मक विकास

शिशु के संवेगात्मक विकास अर्थात् संवेगात्क व्यवहार के विकास के सम्बन्ध में निम्न बातें उल्लेखनीय है।

1. शिशु अपने जन्म के समय से ही संवेगात्मक व्यवहार की अभिव्यक्ति हैं उसका रोना, चिल्लाना और हाथ पैर पटकना इस बात का प्रमाण है।
2. शिशु के संवेगात्मक व्यवहार में अत्यधिक अस्थिरता होती है। उसका संवेग कुछ ही समय के लिए रहता है। और फिर सहसा समाप्त हो जाता है, रोना बन्द करके हँसना आरम्भ कर देता है।
3. शिशु के संवेगो में आरम्भ में अत्यधिक तीव्रता होती है धीरे – धीरे इस तीव्रता में कमी होती चली जाती है उदाहरणार्थ, 2 या 3 माह का शिशु भूख लगने पर तक तक रोता है जब तक उसको दूध नहीं मिल जाता है। 4 या 5 वर्ष का शिशु इस प्रकार का व्यवहार नहीं करता है।
4. शिशु के संवेगात्मक विकास क्रम में क्रमषः परिवर्तन होता चला जाता है, उदाहरणार्थ, शिशु आरम्भ में प्रसन्न होने पर मुस्कराता है। कुछ समय बाद वह अपनो प्रसन्नता को हँसकर, विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करके या बोलकर व्यक्त करता है।
5. शिशु के संवेगो में पहले अस्पष्टता होती है पर धीरे – धीरे उसमें स्पष्टता आती जाती है। उदाहणार्थ, जन्म के बाद प्रथम 3 सप्ताहों में उसकी चिल्लाहट से उसका स्पष्ट नहीं होता है। मेसेल के अनुसार 5 सप्ताह के शिशु की भूख, क्रोध और कष्ट की चिल्लाहयें में अन्तर हो जाता है और उसकी माँ उसका अर्थ समझने लगती ळें
6. जस्टिन के अनुसार –3 वर्ष की आयु से शिशु में अपने साथियों के प्रति प्रेम का विकास हो जाता है। और वह उनके साथ खेलता एवं हँसता है।
7. जीन्स के अनुसार –2 वर्ष का शिशु, साँप से नहीं डरता है, धोरे–धीरे उसमें भया का विकास होता चला जाता है। 3 वर्ष की आयु वह अँधेरे में, पशुओं से और अकेले रहने से डरता है। 5 वर्ष की आयु से वह अपने भय पर नियत्रंण नहीं कर पाता है।
8. एलिस को के अनुसार –शिशु अपने साथियों और बड़े लोगों के संवेगात्मक व्यवहार का अनुकरण करता है। उसे उन्हीं बातो से भय लगता है, जिनसे उनको लगता है। वह क्रोध का क्रोध से और प्रेम का से उत्तर देता है। वह अपनी माता और अपने किसी प्रिय साथी के अतिरिक्त और किसी के प्रति सहानुभूति प्रकट नहीं करता है।

9. स्किनर एवं हैरिमन के अनुसार – शिशु का संवेगात्मक व्यवहार धीरे –2 अधिक निश्चित और स्पष्ट होता जाता है। उनके व्यवहार के विकास की सामान्य दिशा अनिश्चित और अस्पष्ट से विशिष्ट की और होती है।''

बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास

1. बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास निम्न प्रकार से होता है। बालक के संवेग अधिक निश्चित और कम शक्तिशाली हो जाते है। वे बालक को शैशवावस्था के समान उत्तेजित नहीं कर पाते है; उदाहरणार्थ, 6 वर्ष की आयु में बालक का अपने भय और क्रोध पर नियंत्रण हो जाता है।
2. बालक के संवेगों में शिष्टता आ जाती है और उसमें उनका दमन करने की क्षमता उत्पन्न हो जातो है। अतः वह अपने माता –पिता, शिक्षक और बड़ो के सामने उन संवेगों को प्रकट नहीं होने देता, जिनको वे पसन्द नहीं करते है।
3. बालक के संवेगात्मक विकास में पर विद्यालय के वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। उदाहणार्थ आदर्श, स्वतन्त्र और स्वस्थ वातावरण उसको संवेगो का परिष्कार करता है; जबकि भय आतंक और कठोरता के वातारण में ऐसा है। अंसभव है।
4. बालक के संवेगात्मक विकास में शिक्षक का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। अप्रिय व्यवहार शारीरिक दण्ड और कठोर अनुशासन में विश्वास करने वाला शिक्षक, बालक में मानसिक ग्रन्थियों का निर्माण कर देता है। जो उसके संवेगात्मक विकास को विकृत कर देती है।
5. बाल्यावस्था में बालक विभिन्न समूहो का सदस्य होता है। इन समूहों का सदस्य होता है। इन समूहो में साधारणतः पारस्परिक द्वेष और ईर्ष्या पाई जाती है। बालक इन अवांछनीय संवेगो से प्रभावित हुए बिना नहीं बचता है। अतः वह दूसरे बालको के प्रति अपने व्यवहार में संवेगो को व्यक्त करने लगता है।
6. एलिस को के अनुसार – ''बालक सामान्य रुप से प्रसन्न रहता है और दूसरों के प्रति उसका विद्वेष अस्थायी होता है।''

किशोरावास्था में संवेगात्मक विकास

कोल एवं ब्रूस का विचार है–'' किशोरावास्था के आगमन का मुख्य चिन्ह संवेगात्मक विकास में तीव्र परिवर्तन है।'' परिवर्तन के साथ –साथ विकास अन्य रुप भी हैं, यथा –

1. किशोर में प्रेम, दया, क्रोध, सहानभूति आदि संवेग स्थायी रुप धारण कर लेते हैं। वह इन पर नियत्रंण नहीं रख पाता है। अतः वह साधारणतया अन्यायी व्यक्ति के प्रति क्रोध और दुखी व्यक्ति के प्रति दया की अभिव्यक्ति करता है।
2. किशोर की शारीरिक शक्ति की उसके संवेगो पर स्पष्ट छाप होती है, उदाहणार्थ, सबल और स्वस्थ किशोर में संवेगात्मक स्थिरता एवं निर्बल और अस्वस्थ किशोर में संवेगात्मक अस्थिरता पाई जाती है।
3. एलिस को के अनुसार – किशोर अनेक बातों के बारे में चिन्तित रहता है; उदाहरणार्थ, उसे अपनी आकृति, स्वास्थ्य, सम्मान, धन–प्राप्ति, शैक्षिक प्रगति, सामाजिक सफलता और अपनी कमियों की सदैव चिन्ता रहती है।
4. किशोर के ज्ञान, रुचियों और इच्छाओं की वृद्धि के साथ संवेगों को उत्पन्न करने वाली घटनाओं या परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरणार्थः वाल्यावास्था में बाल–विवाह जैसी सामाजिक कुरीति उसके लिए मनोरंजन का कारण हो सकती है, पर किशोरवास्था में यही कुरीति उसके क्रोध को प्रज्जवलित कर सकती है।
5. किशोर न तो बालक समझाा जाता है और न प्रौढ अतः उसे अपने संवेगात्मक जीवन में वातावरण से अनुकूलन करने में बहुत कठिनाई होती है। यदि वह अपने प्रयास से असफल हो जाता है, तो वह घोर निराशा का शिकार बन जाता है। ऐसी दशा में वह या तो घर से भाग जाता है। या आत्महत्या करने की बात सोचता है।
6. किशोरावास्था मे बालक और बालिका, दोनों में काम–प्रवृत्ति बहुत तीव्र हो जाती है और उनके संवेगात्मक व्यवहार पर आसाधारण प्रभाव डालती है।
7. किशोरवास्था में संवेगात्मक विकास इतना विचित्र होता है कि किशोर एक ही परिस्थिति एक अवसर पर उसे उल्लास से भर देती, वही परिस्थिति दूसरे अवसर पर उसे खिन्न कर देती है।

संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक
संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित है।

थकान

अत्यधिक थकान बालक केसंवेगात्मक व्यवहार को प्रभावित करती है। जब बालक थका हुआ होता है, तब उसमें क्रोध या चिडचिड़ापन के समान अवांछनीय संवेगात्मक व्यवहार की प्रवृत्ति होती है।

स्वास्थ्य

बालक के स्वास्थ्य की दषा का उसकी संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। अच्छे स्वास्थ्य वाले बालकों की अपेक्षा बहुत बीमार रहने वाले बालको के संवेगात्मक व्यवहार में अधिक अस्थिरता होती है।

मानसिक योग्यता

अधिक मानसिक योग्यता वाले बालकों का संवेगात्मक क्षेत्र अधिक विस्तृत होता है वे भविष्य के सुखों और दुखो, भय और आपत्तियों के अनुभव कर सकते हैं, साधारणतया निम्नतर मानसिक स्तरों के बालकों में उसी आयु के प्रतिभाषाली बालकों की अपेक्षा संवेगात्मक नियंत्रण कम होता है।

अभिलाषा

माता–पिता को अपने बालक से बड़ी –बड़ी आशायें होती है। स्वयं बालक में कोई न कोई अभिलाषा होती है। यदि उसकी अभिलाषा पूर्ण नहीं होती है तो वह निराशा के सागर में डूब जाता है, साथ ही उसे अपने भग्नाषा माता–पिता की कटु आलोचना सुननी पड़ती हैं।

ऐसी स्थिति में उसमें संवेगात्मक तनाव उत्पन्न हो जाता है।

परिवार

बालक का परिवार उसके संवेगात्मक विकास को तीन प्रकार से प्रभावित करता है,। (1) यदि परिवार के सदस्य अत्यधिक संवेगात्मक होते हैं तो बालक भी उसी प्रकार का हो जाता है। (2) यदि परिवार में शान्ति और सुरक्षा आनन्द के कारण उत्तेजना उत्पन्न नहीं होती है, वो बालक के संवेगात्मक विकास का रुप सन्तुलित होता है। (3) यदि परविार में लड़ाई –झगड़े मिलने –जुलने वालों का बहुत आना और मनोरंजन का कार्यक्रम बनते रहना साधारण घटनायें हैं तो बालक के संवेगो में उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है।

माता–पिता का दृष्टिकोण

बालक के प्रति माता–पिता का दृष्टिकोण उसके संवेगात्मक व्यवहार को प्रभावित करता है। बच्चों की उपेक्षा करना, बहुत समय तक घर से बाहर रहना, बच्चों के बारे में आवष्यकता अधिक चिन्तित रहना, बच्चों के सामने उन रोगों के बारे में बातचीत करना, बच्चों की आवश्यकता से अधिक रक्षा करना, बच्चों की अपनी इच्छा के अनुसार कोई भी कार्य करने की आज्ञा न देना, बच्चों को प्रौढ़ो के समान नए अनुभव न करने देना और बच्चो सब घर के प्रेम का पात्र बनाना। माता–पिता की ये सब बातें बच्चों के अवांछनीय संवेगात्मक के विकास से योग देती है।

सामाजिक स्थिति

सामाजिक स्थिति और संवेगात्मक स्थिरता में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। निम्न सामाजिक स्थिति के बालकों में उच्च सामाजिक स्थिति के बालकों की अपेक्षा अधिक असन्तुलन और अधिक संवेगात्मक अस्थिरता होती है।

सामाजिक स्वीकृति

बालक के कार्यों की सामाजिक स्वीकृति का उसके संवेगात्मक विकास से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। यदि बालक को अपने कार्यो की सामाजिक स्वीकृति नहीं मिलती है, तो उसके संवेगात्मक व्यवहार में उग्रता या षिथिलता आ जाती है।

निर्धनता

निर्धनता बालक के अनेक अशोभनीस संवेगो को स्थायी और शक्तिशाली रुप प्रदान कर देती है। वह विद्यालय में धनी बालकों की वेश–भूषा देखता है, उनके आनन्दपूर्ण जीवन की कहानियाँ सुनता है, उनके सुख और ऐश्वर्य की वस्तुओं का अवलोकन करता है। फलस्वरुप, उसमें द्वेष और ईर्ष्या के संवेग सशक्त रुप धारण करके, उस पर अपना सतत् अधिकार स्थापित कर लेते है।

विद्यालय

यदि विद्यालय के कार्यक्रम उसके संवेगो के अनुकूल होते हैं तो उसे उनमें आनन्द का अनुभव होता है। फलस्वरुप उसके संवेगों का स्वस्थ विकास होता है। इसके विपरीत यदि उसे विद्यालय के कार्यक्रम में असफल होने या अपने दोषों के प्रकटीकरण का भय होता है तो उसमें घृणा, क्रोध और चिड़चिड़ेपन का स्थायी निवास हो जाता है।

शिक्षक

शिक्षक बालक के समक्ष अच्छे और बुरे उदाहरण पस्तुत करके, उसको साहसी या कायर, क्रोधी या सहनशील, झगड़ालू या शान्तिप्रिय बना सकता है। वह उसमें अच्छी आदतों का निर्माण करके और अच्छे आदर्शो का अनुसरण करने की इच्छा उत्पन्न करके, अपने संवेगो पर नियंत्रण रखने की क्षमता का विकास कर सकता है।

अन्य कारक

बालक क संवेगात्मक विकास अंवाछनीय प्रभाव डालने वाले कुछ अन्य महत्वपूर्ण कारक हैं अत्यधिक कार्य, कार्य में अनावश्यक बाधा और अपमानजनक व्यवहार।

निष्कर्ष

संवेगो का बालक के जीवन में अति महत्वपूर्ण स्थान है। श्रेष्ठ संवेगों पर आधारित व्यवहार बालक के स्वास्थ्य को समुन्न, मानसिक दृष्टिकोण को उदार, कार्य करने की इच्छा को बलवती और सामाजिक सम्बन्धों को मधुर बनातें हैं। इसके विपरीत क्षुद्र संवेगो पर आश्रित व्यवहार, बालक के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास पर क्षतिप्रद प्रभाव डालकर उसको विकृत कर देती है। अतः शिक्षकों और अभिभावकों को बालकों और बालिकाओं के संवेगात्मक व्यवहारों के कारणों का अध्ययन करके उनका उचित पथ–प्रदर्शन करना चाहिए ताकि उनका विकास शुभ दिशा की और अग्रसर होकर उनमें संवेगात्मक परिपक्वता उत्पन्न करें और इस प्रकार उनके जीवन को सुखी सफल और समृद्ध बनाए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

शिक्षा मनोविज्ञान, लेखक पी0डी0 पाठक, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र, लेखक – डी0 कुमारी Lucent Publications, Patna.

आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, लेखक –प्रीती वर्मा डी0एन0 श्रीवास्तव।

New Direction in Health Psycology, Author Ajeet Dalal.

Psychology in Physical education & Sports, Dr. M.L. Kamlesh, Educational Publication & Distributors, Delhi.